□ जयंत नारलीकर

अविस्मरणीय

विश्वविख्यात वैज्ञानिक डॉ. जयंत नारलीकर की रोमांचक विज्ञानकथाएं हम पिछले विशेषांकों में प्रस्तुत कर चुके हैं. प्रस्तुत हैं इस बार हिंदी में ही लिखे हुए उनके ये संस्मरण ...

जनवरी १९६१ की बात है. कैंब्रिज विश्वविद्यालय के गणित विभाग में अनुसंधान के लिए भर्ती हुए मुझे कुल तीन ही महीने बीते होंगे. प्रचलित प्रणाली के अनुसार, नया छात्र अपने अनुसंधान की दिशा निश्चित करने से पहले अपने विषय पर लिखे साहित्य का अध्ययन कुछ महीने तक करता है. मैं भी उसी स्थिति से गुजर रहा था, हालांकि खगोलशास्त्र, के अंतर्गत, विश्वनिर्माण-संबंधी प्रश्नों के बारे में मेरी जिज्ञासा जाग्रत हो चुकी थी और इसका श्रेय मेरे गुरु तथा मार्गनिर्देशक प्रो. फ्रेड हॉयेल को था.

लेकिन इसी समय हमारे गणित विभाग की पड़ोसी, कैवेंडिश प्रयोगशाला, में प्रोफेसर राइल ने एक महत्वपूर्ण घोषणा करके मानो मेरे अनुसंधान की दिशा ही निश्चित कर दी. अपने बनाये रेडियो टेलिस्कोप के सहारे विश्व का निरीक्षण करके उन्होंने यह नतीजा निकाला कि विश्व परिवर्तनशील है. विश्व की घनता अरबों वर्ष पहले आज से बहुत अधिक थी, ऐसा राइल महोदय का दावा था.

यह दावा प्रोफेसर हॉयेल के लिए एक चुनौती था. वे स्थिर स्थितिवाले विश्व के सिद्धांत के समर्थक थे. क्या स्थिर स्थितिवाले सिद्धांत का अस्तित्व प्रोफेसर राइल के निरीक्षणों के बावजूद बना रह सकता है? इस प्रश्न का उत्तर हासिल करने के लिए हॉयेल साहब ने मेरी सहायता ली. समय कम था, क्योंकि लंदन की रॉयल एस्ट्रोनॉमिकल सोसायटी के सामने दो हफ्तों के बाद प्रो. राइल अपनी दलीलें पेश करनेवाले थे. क्या हम लोग उस अवसर पर उन दलीलों का जवाब दे सकेंगे? समस्या थी.

कुछ मेहनत और कुछ भाग्य, हम दोनों को इन दलीलों का जवाब तो मिला, लेकिन कुछ व्यस्तताओं के कारण हॉयेल साहब को उस विज्ञान सभा में उपस्थित होना असंभव लगा, अतः उन्होंने हमारे जवाब को पेश करने की जिम्मेदारी मुझ पर छोड़ दी. मैं तो घबरा गया. क्या एक अनुभवहीन छात्र प्रो. राइल तथा उनके समर्थकों से टक्कर ले सकेगा? लेकिन हॉयेल साहब ने धीरज बंधाया, 'हमारा हिसाब सही है तो फिर डर किस बात का?' उनके इस वाक्य ने मुझे नया आत्मविश्वास दिया और मैं लंदन जा कर उस विवाद में अपना दृष्टिकोण स्थापित कर सका.

तब से मैंने अनेक वैज्ञानिक वाद-विवादों में भाग लिया है. लेकिन उस पहले विवाद की स्मृति अब तक धुंधली नहीं पड़ी.

अब एक और प्रसंग सुनिए. जब मेरा डॉक्टरेट का प्रबंध पूरा हो चुका तो मुझे एक और कठिन परीक्षा से गुजरना पड़ा. मेरे दोनों परीक्षक कैंब्रिज के बाहर के थे. वे दोनों परीक्षक तथा मैं अमरीका के कार्नेल विश्वविद्यालय में आयोजित एक परिसंवाद में आमंत्रित थे. दोनों परीक्षकों ने विश्वविद्यालय से प्रार्थना की कि चूंकि हम तीनों कार्नेल में एक साथ आयेंगे, इसलिए सबकी दृष्टि से यही सुभीते की बात होगी कि मेरी जबानी परीक्षा वहीं हो. विश्वविद्यालय ने उनका यह आग्रह मान लिया.

मई, १९६३ के अंत में उक्त परिसंवाद था. वहां मेरा भी भाषण था. परिसंवाद का विषय था, 'दि नेचर ऑफ टाइम' यानी 'काल क्या है?' इस विषय को ले कर भौतिशास्त्रियों तथा दार्शनिकों में

● शेष पृष्ठ ५२ पर→

अविस्मरणीय

→ • पृष्ठ ९ का शेष

चर्चा थी. किसी का किसी बात पर मतैक्य नहीं था. सब अपनी बात दुहराते तथा दूसरों की बातों का खंडन करते. ऐसी मंडली में मुझे अपने प्रबंध में सिद्ध किये हुए कुछ मत प्रकट करने थे, चर्चा तो बड़ी देर तक चली, मनोरंजक भी थी, लेकिन जब समाप्त हुई, तो छुट्टी मिलने का आनंद मिला. फिर याद आया, अभी तो ज़बानी परीक्षा बाकी है, लेकिन दोनों परीक्षकों ने कहा, 'इसकी परीक्षा तो यहीं हो गयी, अब हम लोग क्या सवाल पूछेंगे?' बस नाम भर को दो सवाल पूछ कर मेरी छुट्टी कर दी गयी.

एक अनुभव और याद आता है ११ जून १९८४ का, जब मेरे गुरु तथा सह-संशोधक फ्रेड हॉयेल का और मेरा भाषण लंदन की प्रसिद्ध रॉयल सोसायटी में था. विषय था—गुरुत्वाकर्षण का सिद्धांत. अनेक प्रसिद्ध वैज्ञानिक वहां मौजूद थे, समाचारपत्रवाले भी थे. भाषण का स्थान था, ठीक सर आइजक न्यूटन की विशाल तसवीर के नीचे. वही न्यूटन, जिन्होंने अपने गुरुत्वाकर्षण के सिद्धांत द्वारा आधुनिक भौतिकशास्त्र की नींव डाली थी. यद्यपि इस अवसर पर मैं किसी वाद-विवाद में भाग नहीं ले रहा था. फिर भी इस प्रसिद्ध सभा का गौरवशाली इतिहास, यहां पर उपस्थित दिग्गज वैज्ञानिक तथा तिल धरने को जगह नहीं-जैसी भीड़—ये तमाम बातें मानसिक तनाव उत्पन्न करने के लिए पर्याप्त थीं. फिर भी आज तक याद आता है. वह मानसिक संतोष, जब वैसे महत्वपूर्ण अवसर पर मुझे अपने विषय पर भाषण करने का मौका मिला.